पर गधे जोते जाते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि वे घोड़े से अपरिचित थे। यहाँ के सैनिक अनुशासित होकर शत्रु पर आक्रमण करते थे। इसी अनुशासन के बल पर इन्होंने बहुत से युद्धों में विजय अर्जित की थी और बर्बर आक्रमणकारियों से, जिनकी लोलुप दृष्टि सुमेरिया के उर्वर मैदान पर लगी रहती थी, रक्षा की थी। युद्ध क्रूर एवं दर्दनाक होते थे। नगर पर विजय प्राप्त करने के बाद बन्दियों का बिना किसी भेद-भाव के अन्धाधुन्ध हत्या कर दी जाती थी, मन्दिरों की सम्पत्ति लूट ली जाती थी तथा भवनों को ध्वस्त कर दिया जाता था। उम्मा के लूगल जग्गेसी ने लगश को जिस तरह से वीरान कर दिया था, उसकी स्मृति एक कविता में सुरक्षित है। कभी-कभी बन्दियों को दास बनाकर बेंच दिया जाता था तथा बन्दियों का 1/10 भाग देवताओं को बलि के रूप में भी चढ़ाया जाता था। इस प्रकार के युद्धों का परिणाम यह हुआ कि छोटे राज्य पतनोन्मुख होते चले गये तथा सुमेरिया की शक्ति शिथिल पड़ती गयी, युद्ध काल के अलावा इन सैनिकों से मन्दिरों में भी काम लिया जाता था।

सामाजिक व्यवस्था—सुमेरियन सामाजिक व्यवस्था विषमताओं पर आधृत थी। राजा और नगर राज्यों के प्रमुख समाज से पृथक और परे थे। वे स्वेच्छाचारी थे तथा समाज की कोई व्यवस्था उन पर लागू नहीं होती थी। समाज में उन्हें उच्च स्थान प्राप्त था। इससे प्रतिध्वनित होता है कि समाज कई वर्गों में बँटा हुआ था।

वर्ग-विभाजन—व्यावहारिक रूप में प्राचीन सुमेरियन समाज अभिजात, सर्वसाधारण एवं दास अर्थात उच्च, मध्यम और निम्न, तीन वर्ग में विभाजित था। अभिजात वर्ग में राजा, पुरोहित, उच्च पदाधिकारी तथा राज्य परिवार के सदस्य होते थे। सर्वसाधारण वर्ग में सामन्त,कृषक, व्यापारी, व्यवसायी आदि होते थे तथा तीसरा वर्ग दासों का था। वैधानिक रूप से उच्च वर्ग निम्न वर्ग की अपेक्षा अधिक सुविधाएँ प्राप्त करता था। इनके अपराधी को कठोर दण्ड दिया जाता था। इन सभी में पुरोहित को अधिक सम्मान दिया जाता था। ऐसी मान्यता थी कि राजाओं के पहले पुरोहित ही शासन करते थे। 'पुरोहित एवं राजाओं के पश्चात् राजकर्मचारी एवं लिपिकों का स्थान था। सर्वसाधारण वर्ग के सदस्य स्वतंत्र थे तथा दासों की अपेक्षा उनकी स्थिति अच्छी थी। दासों की स्थिति सबसे खराब थी। ये मुख्यतः खेती, सिंचाई तथा निर्माण कार्य करते थे।

दासों की यहाँ अत्यधिक संख्या थी। ऋण न चुका सकने पर, युद्ध में विजित लोगों को, पिता की आज्ञा न मानने वाले पुत्र को इस कोटि में रखा जाता था। ऋण न चुका सकने के कारण पत्नी,पुत्री और पुत्र को दास बनाया जा सकता था। माता-पिता की आज्ञा का उल्लंघन करने वाले पुत्र भी दास बनाये जाते थे। सामान्यतया दासों का परिवार दास नहीं होता था। यहाँ दासों की अवस्था सामान्य थी। इनको दूसरे के हाथ बेचा जा सकता था। इन्हें स्वतंत्र मध्य वर्ग का सदस्य बनने के लिए छूट प्रदान की गयी थी। कभी भी इनके प्रति अभद्रतापूर्ण व्यवहार नहीं किया जाता था।

परिवार—सुमेरियन परिवार पितृ-प्रधान था। इसमें पिता का स्थान सर्वोपरि होता था। वह अपने पुत्रों को त्याग सकता था, बेच सकता था तथा निष्कासित कर सकता था। कभी-कभी पिता अपनी लड़कियों को देवालयों में देवदासियों के रूप में भी अर्पित कर देता था। इससे यह स्पष्ट है कि पिता का अपनी संतति पर पूर्ण अधिकार होता था। वह उन्हें अपनी

संतति मानने से इनकार भी कर सकता था तथा नगर से बाहर भी निकाल सकता था। संतति को किसी प्रकार का वैधानिक अधिकार नहीं प्राप्त था। विशेष परिस्थिति में पति अपनी पत्नी को भी बेंच सकता था।

विवाह-व्यवस्था—परिवार का बड़ा-बूढ़ा बच्चों का विवाह निश्चित करता था। जिन शर्तों पर विवाह तय की जाती थी, उनको लिपिबद्ध किया जाता था तथा गवाहों द्वारा वह अनुमोदित होती थी। दहेज प्रथा प्रचलित थी। पत्नी को दहेज का पैसा मिलता था, जिस पर उसका ही अधिकार होता था। वह उसे अपने बच्चों में बाँटती थी। यदि उनकी सन्तति नहीं होती थी, तो उसकी मृत्यु पर उसका अवशिष्ट धन उसके माता-पिता ले लेते थे। विवाह का उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति था। ऐसा कहा जाता है कि यह पति से कई सन्तानें उत्पन्न करेगी। पत्नी के व्यभिचारी होने पर पति द्वारा दूसरा विवाह किया जाता था, किन्तु पहली पत्नी का परित्याग नहीं किया जाता था उसे दासी बना लिया जाता था। पति की मृत्यु पर पत्नियाँ पुनर्विवाह कर सकती थीं। रखैल की प्रथा भी प्रचलित थी, किन्तु इसे निन्दित नहीं माना जाता था। रखैल की सन्तति को वास्तविक पत्नी से उत्पन्न पुत्र के समान स्थान प्राप्त था।

भोजन एवं वस्त्राभूषण— यह सभ्यता कृषि-प्रधान सभ्यता थी। इसलिए यहाँ के निवासी गेहूँ, खजूर, जौ आदि का भोजन करते थे। फलों का भी उत्पादन होता था। अंगूर की पैदावार होने से कहा जा सकता है कि ये लोग फलाहारी भी थे। मांसाहार भी किया जाता था।

पुरुष साधारणतया कमर के ऊपर नंगे रहते थे तथा नीचे की ओर लुंगी का प्रयोग करते थे। बाद में बाहर जाते समय ये ऊपरी शरीर को भी ढकने लगे। स्त्रियाँ भी आकर्षक वस्त्र पहनती थीं। वे आभूषणों का प्रयोग करती थीं। जो स्त्रियाँ उच्च परिवार की होती थी वे बहुमूल्य वस्त्र और आभूषणों का प्रयोग करती थीं। प्रायः कर्णफूल, गलाबन्द, कड़ा, कण्ठाहार, अंगूठी, बाल के पिन आदि आभूषणों का प्रयोग किया जाता था। ये सोने, चाँदी, नीलम आदि के बने होते थे। यहाँ एक अंगूठी प्राप्त हुई है जिसमे नीलम जड़ा है।

सौन्दर्य प्रसाधन—उत्खनन के दौरान यहाँ से एक प्रसाधन-पेटिका प्राप्त हुई है। यह डिबिया के आकार की है जो सोने के तार द्वारा सजाई गयी है। इसमें एक चिमटी रखी है, जो संभवतः भौहों से अनावश्यक बाल को उखाड़ने के लिए प्रयोग में लायी जाती थी। इसके अतिरिक्त एक छोटी सी छड़ी तथा चम्मच भी इसमें रखा है। ऐसा आभास होता है कि चम्मच गाल की लाली आदि निकालने के लिए प्रयोग में लाया जाता रहा होगा तथा छड़ी से शरीर की त्वचा ठीक करते रहे होंगे। प्रसाधन-पेटिका में लाली तथा काजल आदि भी रखने की जगह बनी हुई थी। रानी, शुवअद की समाधि से अनामिका के बराबर स्वर्णिम तारों से युक्त एक प्रसाधन पेटिका तथा नीलम से युक्त एक सोने की पिन पायी गयी है।

स्त्रियों की स्थिति—सुमेरियन सामाजिक संगठन में स्त्रियों की स्थिति अत्यन्त ठीक थी। यद्यपि कानून में पति को यह अधिकार दिया गया था कि वह अपनी पत्नी तथा बच्चों को ऋण आदि के भुगतान के लिए बेच सकता था, फिर भी व्यवहार में ऐसा नहीं किया जाता था, क्योंकि अभी तक इस प्रकार के साक्ष्य का अभाव है। स्त्रियों को पति से अलग सम्पत्ति रखने की छूट थी। वे स्वतन्त्र व्यापार भी कर सकती थीं तथा अपने लिए दासियाँ भी रख सकती थीं। पारिवारिक व्यवस्था में पति-पत्नी का सम्मिलित उत्तरदायित्व होता था।

पैतृक सम्पत्ति का स्वामी बड़ा वयस्क पुत्र होता था। इसके अभाव में पत्नी ही उसकी देख-रेख करती थी। प्रायः प्रसन्नता से पिता अपनी-अपनी पुत्रियों को मन्दिर में देवदासी के रूप में दे देते थे। उसके साथ उनको दहेज में दी जाने वाली सम्पत्ति भी दे दी जाती थी। उत्सव भी मनाया जाता था। ऐसा प्रतीत होता है कि यह प्रथा अच्छी मानी जाती रही होगी। यदि वहाँ उन्हें सन्तानोत्पत्ति हो जाती थी, तो उसको दूसरे लोग गोद ले लेते थे। इन्हें देवताओं की रखैल माना जाता था। स्त्रियों को शासन का भी अधिकार था। बन्ध्या स्त्री को तलाक दिया जा सकता था। यदि कोई स्त्री पुत्र उत्पन्न करने से मुकरती थी, तो उसे डुबा दिया जाता था। व्यभिचारिणी स्त्री का अपराध अक्षम्य था तथा उन्हें मृत्यु दण्ड भी दिया जा सकता था।

सामाजिक मान्यताएं एवं मृत्तक-संस्कार—सुमेरिया वासियों की धारणा थी कि मनुष्य मरने के बाद भी अपनी आवश्यक सामग्रियाँ खोजता है। इसीलिए उनकी कब्रों में शस्त्रास्त्र तथा वस्त्राभूषण एवं अन्य उपयोगी वस्तुएँ रखी हुई मिली हैं। सामान्य लोगों को गृह के आंगन में या कमरे में गाड़ते थे। इसके लिए समाधियाँ भी बाहर बनायी जाती थीं। इनकी कब्र चतुर्भुजाकार होती थी। इसमें मृतक को लिटाकर ऊपर से कच्ची ईटों को मेहराब की तरह सजाकर दफनाने की प्रथा प्रचलित थी। कभी-कभी दो घड़ों में एक शव को लिटा देते थे, उसका मुँह आमने-सामने मिलाकर गाड़ दिया जाता था। इनके साथ दैनिक उपयोग की वस्तुएँ, आयुद्य आभूषण आदि भी गाड़ते थे, ताकि परलोक में उसे उपयोगी वस्तुएँ मिल सके। उर से एक राजा की समाधि मिली है, जिसमें उपर्युक्त के अतिरिक्त रानी, परिचारक वृषभ आदि भी दफनाये गये थे।

अर्थव्यवस्था—सुमेरियन अर्थव्यवस्था की प्रेरणात्मक एवं वैधानिक पक्ष की तीन शक्तियाँ कार्यरत थीं। इनमें प्राथमिकता की दृष्टि से भूमि-उर्वरता का उल्लेख किया जा सकता है। दजला-फरात के तटीय मैदान अत्यन्त उर्वर थे। शरदकालीन वर्षा के फलस्वरूप उत्पन्न बाढ़ के कारण लायी गयी मिट्टी के जमाव यह भू-भाग प्रतिवर्ष नवीन एवं उर्वर हो जाता था। यही कारण है कि यह भू-भाग नवपाषणिक काल से ही मनुष्यों के आकर्षण का केन्द्र बना। अपनी उर्वरता के कारण ही मेसोपोटामिया का यह भू-भाग उर्वर अर्द्धचन्द्र का अंग बना था। उर्वरता की दृष्टि से दजला-फरात घाटी का वही स्थान है जो मिस्र में नील नदी घाटी का है। स्वेन का विचार है कि दजला-फरात घाटी के निवासी इन नदियों पर उसी प्रकार आश्रित थे जिस प्रकार मिस्र के निवासी इन नदियों पर उसी प्रकार आश्रित थे जिस प्रकार मिस्र के निवासी नील नदी पर। एक ओर इनके उर्वर मैदान में कृषि सम्बन्धी सुविधाएँ उपलब्ध थीं, तो दूसरी ओर इन्होंने सिंचाई के लिए समुचित साधन प्रदान किया था। मेसोपोटामिया में नहरों का जाल-सा बिछा था। सुमेरियन आर्थिक गठन की दूसरी विधायक शक्ति व्यापारिक सुविधा थी। वहीं पर यातायात हेतु समुचित एवं सुविधा सम्पन्न मार्ग भी निर्मित किया गया था। मेसोपोटामिया की समुद्रतटीय स्थिति का भी इन्हें पर्याप्त लाभ मिला तथा फारस की खाड़ी से इनका सीधा सम्बन्ध स्थापित हुआ। नगर-राज्यों ने व्यापार-उन्नति को प्रोत्साहित किया। अन्तिम प्रेरणादायक शक्ति थी यहाँ की लिपि। लिपि की सहायता से व्यापारिक क्रिया-कलापों को विनिमय हेतु लिपिबद्ध करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। इससे सुमेरियन अर्थ जगत को सुव्यवस्थित ढंग से संचालित करने की प्रेरणा मिली। अतः प्रमुख व्यापारिक

विधियों के विकास एवं उनके नियमन में लिपि कला की भूमिका भी अविस्मरणीय मानी जा सकती है।

कृषि कार्य–सुमेरियन अर्थव्यवस्था मूलतः कृषि परक थी। भूमि की उर्वरता, सिंचाई विधियों के ज्ञान से तथा यहाँ के कृषकों के कठिन परिश्रम के फलस्वरूप चतुर्दिक हरियाली का वातावरण सा फैला हुआ था। कृषि के विकास एवं उसमें हल की उपयोगिता के कारण ही हेनरी लूकस जैसे विद्वान इसे 'हल-प्रधान संस्कृति (Plough culture) कहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि हल का विकास नवपाषाण कालीन कुदाल के आधार पर हुआ। इसकी सक्रियता को सुमेरियनों ने भांपी थी। भूमि पर नगर शासक मन्दिर अथवा सैनिक अधिकारियों का स्वामित्व रहता था, किन्तु ये लोग नगरों में रहते थे इसलिए खेती मुख्यतः लगानधारी काश्तकारों (खेतिहरों या उरुलल) या दासों द्वारा की जाती थीं। यहाँ के आर्थिक संगठन में मन्दिरों का विशेष हस्तक्षेप था। किसी समय यह माना जाता था कि सुमेरिया में देवालय ही अर्थ व्यवस्था के मूल आधार थे, किन्तु कालान्तर में इस अवधारणा में परिवर्तन आया। वास्तव में, मन्दिरों के अधिकार में पर्याप्त कृषि योग्य भूमि, सम्पूर्ण कृषि योग्य भूमि का केवल 16.5% ही थी। सुमेरियन आर्थिक गठन दो रूपों में विकसित हुआ था। एक ओर कृषि योग्य भूमि मन्दिरों की सम्पत्ति समझी जाती थी, जो राज्य सम्पत्ति थी। इस पर प्रारम्भ में इसी का अधिकार था, पर बाद में शासकों का हो गया। दूसरी ओर कुछ कृषि योग्य भूमि व्यक्तिगत अधिकार में थी, जिस पर मन्दिर या राज्य का कोई वर्चस्व नहीं था।[1]

यहाँ की मुख्य फसलें गेहूँ, जौ, तिल, मटर एवं खजूर की खेती करते थे।[2] इसमें भी जौ की प्रधानता थी। मन्दिरों की देखरेख में बगीचे भी लगाये जाते थे। अन्नोत्पादन मुख्यतः गाँवों में होता था। नगर निवासी इसे कई विधियों से प्राप्त करते थे। सामान्यतः गाँव में अनाज उत्पादित कर नगरों में भेजा जाता था तथा इसके बदले में नगरों से आवश्यक वस्तुएँ गाँवों में आती थीं। नगर शासक भी गाँवों से कर के रूप में अनाज प्राप्त करता था। यह कर मन्दिर के कोष में जमा की जाती थी। लगानधारी व्यक्ति से उत्पादन का 1/6 से 1/3 भाग लगान में वसूल किया जाता था। नगर-शासक कर के बदले गाँव की सुरक्षा करता था।

नगर शासक मुख्य पुरोहित भी होता था। वह समाज का सर्वाधिक शिक्षित एवं योग्य व्यक्ति माना जाता था। अतः वह जैसा चाहता था, ग्रामीण कृषकों को अपने बुद्धि कौशल से अपने अनुरूप मोड़ लेता था। इस प्रकार धार्मिक नेता के साथ-साथ पुरोहित आर्थिक गठन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता था। यह एक प्रकार से धर्म प्रभावित पूँजीवादी अर्थव्यवस्था की शुरूआत थी। सुमेरियाई लेखों से कृषि व्यवस्था सम्बन्धित जानकारी मिलती है कि कृषि योग्य भूमि की पैमाइश, बीज एवं उत्पादन का आय-व्यय बड़ी सावधानी से रखा जाता था। मन्दिर के पास जितनी भूमि होती थी उसका ब्यौरा रखा जाता था।

यहाँ पर मन्दिर की ओर से सहायता के रूप में बीज, औजार आदि दिया जाता था। सिंचाई की व्यवस्था की गयी थी। नदियों में बाढ़ आती थी। उससे खेत को डूबने से रोकने

के लिए खेतों को चारों ओर ऊँची मेड़ द्वारा घेरा जाता था तथा उसका जल बड़े-बड़े गड्ढे बनाकर एकत्रित कर लिया जाता था। इसी जल को सड़ूफों (ढेकली) तथा नहरों द्वारा खेतों को पहुँचाया जाता था। निप्पुर से प्राप्त एक पत्थर पर पिता द्वारा अपने पुत्र को दी जाने वाली कृषि-सम्बन्धी शिक्षा अंकित है। इसमें कृषि के विभिन्न कार्यों के लिए उपयुक्त समय और कौशल का विवरण एक पिता अपने पुत्र को मई-जून के बाद आने के समय से लेकर अप्रैल-मई जब तक फसल कट जाती है, देता है। इसे 'कृषि पंचांग' कहते हैं।

पशुपालन—उपजाऊ भूमि और कृषि-प्रधान सभ्यता होने से पशुओं की यहाँ आवश्यकता थी, अस्तु यहाँ का दूसरा प्रमुख उद्योग पशु पालन था। प्रायः गाय, बैल, भेंड़, बकरी, सूअर आदि पाले जाते थे। इनमें से कुछ तो दूध के लिए पाले जाते होंगे। गाय को देवी के रूप में स्वीकार किया गया था। मन्दिरों के अधिकार में बड़ी संख्या में पशु रहते थे इनके निवास के लिए पशुशालाएँ तथा चरने के लिए चारागाहों की व्यवस्था रहती थी। ऐसा प्रतीत होता है कि पशुचारकों का एक पृथक वर्ग था: विशेषकर सूअर चराने वालों का। इनकी सहायता के लिए रखवाले कुत्ते रहते थे। पशुओं के झुण्ड छोटे ही होते थे। यहाँ से प्राप्त चित्राक्षरों में वन्य पशुओं के चित्रों की अधिकता है। इससे विदित होता है कि शिकार की प्रथा अभी भी प्रचलित थी तथा जंगली पशुओं का शिकार किया जाता था। मछली पालने का धन्धा भी किया जाता था। उर के समीप एक मन्दिर से प्राप्त चित्रों से दुग्ध-उद्योग से सम्बन्धित सूचनाएँ मिलती हैं। पशुओं का उपयोग कई प्रकार से करते थे। कुछ दुधारू पशुओं से दूध पाते थे। बैल का उपयोग हल जोतने तथा गधों का पहिएदार गाड़ी खींचने में किया जाता था। भेड़ से प्राप्त ऊन से वस्त्र बनाये जाते थे। इनकी बाल का भी उपयोग किया जाता था।

उद्योग-धन्धे—यहाँ के निवासी कृषि-पशुपालन के साथ ही कई प्रकार के उद्योग धन्धों एवं व्यवसायों का विकास भी कर लिया था। उद्योग धन्धे प्रायः मन्दिरों के नियन्त्रण में थे। यहाँ विविध प्रकार की वस्तुएँ बनायी जाती थीं। जो वस्तुएँ उपयोग से बच जाती थी उन्हें निर्यात किया जाता था। ये कच्चा-माल आयातित करते थे। मुख्य रूप से धातु-उद्योग, वस्त्रोद्योग, तथा गाड़ी बनाने के उद्योग प्रचलित थे। सुमेरिया में कच्चे माल की कमी थी। अतः धातुएँ बाहर से मंगानी पड़ती थीं। तांबे, कांसे के साथ-साथ सोने, चाँदी एवं शीशे की सहायता से विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ बनायी जाती थी। सोने का जितना अच्छा काम सुमेरिया में किया गया उतना शायद अन्यत्र कहीं नहीं किया गया। धातु उद्योग के पश्चात् दूसरे स्तर पर वस्त्र उद्योग का उल्लेख किया जा सकता है। इन्हें भेड़ों से पर्याप्त मात्रा में ऊन प्राप्त हो जाता था जिससे वस्त्र उद्योग को विकसित होने का पूर्ण अवसर मिला। इसके लिए वे सन की खेती करते थे। वस्त्रोद्योग शासक द्वारा नियुक्त निरीक्षकों की देख-रेख में संचालित होता था। यह उद्योग विशेष वर्ग के हाथों में था जो कातने से लेकर बुनने एंव रंगने का कार्य करते थे। यहाँ गाड़ी बनाने का उद्योग भी प्रचलित था। गाड़ी के पहिये लकड़ी से बनाये जाते थे जिन पर तांबे या चमड़े के हाल चढ़ा दिये जाते थे। किश नामक स्थान से प्राप्त पहियेदार गाड़ियाँ विश्व की सबसे प्राचीन गाड़ियाँ हैं। इनके साथ-साथ शायद ये लोग रोटी बनाने, शराब बनाने तथा बर्तन-निर्माण का कार्य भी करते थे। अल्प विकसित होने के कारण प्रतीत होता है कि उनका महत्व निश्चित ही था।

व्यापार एवं वाणिज्य—उत्पादन की अधिकता होने से उसको बाहर बेचने की प्रथा ने यहाँ व्यापारिक जीवन का आरम्भ किया। चूँकि कच्चा माल यहाँ कम पैदा होता था इससे उसका आयात कर वस्तुएँ तैयार की जाती थीं। अधिक तैयार वस्तुओं को बाहर बेचा जाता था। इस कार्य में इन्हें राजकीय सहयोग भी प्राप्त था। वह उत्पादन तथा विक्रय में सहायता देता था। सारगोन काल में सैनिक सफलताओं के कारण दूरस्थ देशों से इनका राजनीतिक सम्बन्ध व्यापारिक सम्बन्ध के रूप में भी युक्त हो गया। तत्युगीन शासकों ने व्यापारियों को न केवल आन्तरिक सुरक्षा दी अपितु बाहर भी इनके लिए कुछ किया। इन्होंने ही मुद्रा का प्रचलन किया। पहिये के आविष्कार से उन्होंने व्यापार को बहुत विकसित किया।

यहाँ व्यापार दो क्षेत्रों में होता था—मन्दिरों तथा व्यक्तिगत लोगों द्वारा। मन्दिरों में कुछ सौदागर रहते थे जो विदेश से कच्चे माल तथा सोना, चाँदी आदि मन्दिरों के लिए मंगाते थे और बदले में अपने यहाँ से अनाज भेजते थे। व्यापार के बदले मन्दिर के व्यापारियों को मन्दिर की ओर से भूमि तथा काफिलों के लिए पशु दिये जाते थे। व्यक्तिगत क्षेत्रों में व्यापार करने वाले लोग विलासिता की सामग्रियां धातुएँ तथा बहुमूल्य पत्थरों का आयात करते थे। जीवनोपयोगी वस्तुओं के उत्पादन में ये आत्मनिर्भर थे।

ये अपना व्यापार मिस्र, भूमध्यसागरीय तटों, एशिया माइनर सिन्धु घाटी आदि से करते थे। फारस की खाड़ी के देश ओमान से ताँबा, पूर्वी प्रदेश सोरुस से चाँदी, सीरिया और एशिया माइनर से टिन तथा बदख्शाँ से वैदूर्यमणि मंगाते थे। भूमध्यसागर के पूर्वी तटों पर इसकी व्यापारिक प्रतिस्पर्धा मिस्र के व्यापारियों के साथ थी। सिन्धु सभ्यता में यहाँ की मुद्राएँ प्राप्त हुई हैं। पश्चिमी में भूमध्यसागर के पूर्वी तटों से व्यापार के लिए ये लोग स्थल तथा जल दोनों मार्गों का प्रयोग करते थे। स्थल मार्ग से व्यापार में भारवाही पशुओं तथा पहिएदार गाड़ियों का प्रयोग किया जाता था। किश नामक नगर के उत्खनन से इस प्रकार की गाड़ियाँ प्राप्त हुई हैं। जल-मार्ग से नावों द्वारा व्यापार किया जाता था। इनमें मुख्य मार्गों से सामान लाकर नहरों द्वारा व्यापारिक केन्द्रों के पास भेजा जाता था।

क्रय-विक्रय हेतु सर्वप्रथम अदल-बदल प्रणाली ही प्रचलित थी। कालान्तर में धातु की छड़ों का प्रयोग भी लेन-देन में किया जाने लगा। इसमें चाँदी की छड़ें ही विशेष प्रयोग की जाती थी। इनका भार लगभग एक शेकेल होता था। संभवतः शेकेल से ही कालान्तर में ईरानी मुद्रा सिगलास का प्रादुर्भाव हुआ होगा। सुविधा के लिए शेकेल नामक तौल के चाँदी के टुकड़े काट लिये जाते थे और उन्हीं से वस्तुओं का क्रय-विक्रय होता था। इसे हम यहाँ की मुद्रा का प्रारम्भिक स्वरूप कह सकते हैं।

व्यापारियों के पारस्परिक व्यापार सम्बन्धी लिखित अनुबन्ध (Contract) होते थे। इसका लिखित रूप यहाँ की मिट्टी की पट्टियों से प्राप्त होता है। इस पर दोनों पक्षों तथा साक्ष्यों के हस्ताक्षर भी मिले हैं। ये सम्भवतः इसकी प्रामाणिकता के लिए किये जाते रहें होंगे। विक्रय के लिए मध्यस्थ (एजेन्ट) की व्यवस्था थी। इनको बिक्री का एक लाभांश प्राप्त होता था। ये वर्गीकृत सामग्रियों के नमूने साथ रखते थे। उसी के आधार पर दूसरे व्यापारियों को सामान बेचते थे। बिक्री के समय बिल, रसीद आदि का भी उपयोग किया जाता था। ऋण लेने का भी विधान

मिलता है जिसके बदले एक निश्चित ब्याज दिया जाता था।[1] इसलिए यहाँ जमा करने की भी व्यवस्था थी। जिसके पास अधिक धन होता था वह सूद के लिए धन जमा करता था। व्यापारिक पत्र भी लिखे जाते थे। ब्याज की दर अलग-अलग वस्तुओं पर अलग-अलग होती थी। ऊर की एक तख्ती से ज्ञात होता है कि तृतीय राजवंश के समय 33 $^{1}/_{2}$% ब्याज पर उधार लिया जाता था। विलड्यूरेण्ट ने इसे 15 से 33 प्रतिशत वार्षिक बतलाया है।[2]

यहाँ बाजारों की भी व्यवस्था थी। आन्तरिक व्यापार प्रायः मन्दिरों के पास ही लगाए जाते थे। एक तख्ती पर लिखित लेख के अनुसार "वह नगर जहाँ बहुत शोर होता है।" इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि यहाँ अधिक भीड़ होती थी। इससे प्रतिध्वनित होता है कि यहाँ का व्यापारिक जीवन अत्यन्त व्यस्त रहा। बिलड्यूरेण्ट का मत है कि यदि ब्याज की दर के आधार पर किसी समाज की स्थिति का अनुमान लगाया जाय तो हम कह सकते हैं कि सुमेरियन व्यापारी एक अनिश्चित एवं असुरक्षित आर्थिक एवं राजनीतिक वातावरण में निवास करते थे।